शान्ति की शिक्षा और सामाजिक–समरसता

*डॉ. माली राम नेहरा
**डॉ. जितेन्द्र कुमार लोढ़ा

सार–संक्षेप

समाज में शांति की स्थापना के मुख्य सरोकार समानता, न्याय, सह–अस्तित्व, सहकार तथा समरसता है। इस प्रकार समाजिक–समरसता एक ऐसी मूल्यपरक–व्यवस्था है, जिसमें सभी मानव, सबके लिए, अपनी जीवन पद्धति को इस प्रकार दिशा देते है कि उनका व्यवहार स्वयं, परिवार, पड़ौस, कार्यस्थल, नगर, जाति, समाज, देश एवं विश्व के लिए ऐसा सुख व आनंद का सृजन करता है, जिससे व्यापक–हित के लिए सीमित–हित को स्वेच्छा से त्याग करने की प्रवृत्ति को स्वचालित रूप से दिशा मिलती है, जिसके परिणामस्वरूप अशांति का प्रश्न ही नहीं उठेगा। सरल भाव में वैश्विक–व्यवस्था से लेकर निज–प्रबंध तक जब व्यक्ति विशेष बड़े हितों के लिए संकीर्ण हितों का स्वेच्छा से त्याग करेगा तो टकराहट का पर्यावरण पैदा नहीं होगा, द्वन्द्वों का उदय नहीं होगा, और स्वतः ही सर्वोदय की स्थिति पैदा होगी। स्पष्ट है कि सर्वोदय की स्थितियां पैदा करना ही शांति की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। अतः सामाजिक–समरसता की स्थापना की विषय–वस्तु ही, शांति की शिक्षा की मुख्य विषय–वस्तु व सरोकार है।

इस प्रकार शांति की शिक्षा, शोषण रहित, उत्पीड़न रहित तथा अहिंसक समाज के सृजन की शिक्षा है, जो शांति के लिए भावी पीढ़ी में उन मूल्यों, दृष्टिकोणों एवं कौशलों के पोषण पर बल देती है, जो व्यापक के लिए संकीर्ण को त्यागने की प्रवृत्ति पैदा करें, जो प्रकृति और मानव के बीच सामंजस्य बिठाने के प्रबल प्रयास करें, जो संस्कार–युक्त विकास को दिशा प्रदान करें। इसी क्रम के व्यापक–भाव में हम कह सकते है कि जो मानव–मात्र की शक्ति, बुद्धि, श्रम और ज्ञान का इस प्रकार विनियोजन करें कि समाज में सर्वमंगल की भावना व समरसता का दर्शन व प्रबंधन, स्वतः भाव से स्थापित हो जाए। इस प्रकार सामाजिक– समरसता का पर्यावरण शांति–स्थापना की अनिवार्य मांग तथा शांति–शिक्षा का मुख्य सरोकार है। इसलिए सामाजिक–समरसता की स्थापना का शंखनाद, केवल और केवल सर्वकालिक– उपयोगिता वाली 'शांति की शिक्षा' से होना चाहिए। क्योंकि शांति की शिक्षा और सामाजिक–समरसता दोनों ही अवधारणायें एक–दूसरे की बीज और फल दोनों हैं.....

आज शक्ति और संसाधन हासिल करने की अंधी दौड़ में दीर्घकालिक मानव–मूल्य प्रायः सभी देशों में पीछे छूट गये है। आर्थिक व भौतिक संसाधनों की प्रतियोगिता में उलझा आज का विश्व लगभग अशांत–बदहाल का प्रतिनिधित्व कर रहा है। इन परिस्थितियों में शिक्षा को नागरिकों में शांति, सहिष्णुता, दायित्व व त्याग की संस्कृति, संस्कारमय–विकास की धारणा, सामाजिक–न्याय, समानता, सामाजिक–प्रतिबद्धता, शाश्वत–मूल्य चिन्तन, पारस्परिक–निर्भरता, अन्तर्राष्ट्रीय–सहयोग एवं सामाजिक–समरसता आदि के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी। इस संबंध में हमारे **पूर्व**

राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का यह कथन एकदम शिक्षा परक या ज्ञानपरक है कि **"हमारा सपना : लोग स्वच्छ–हरित पर्यावरण में रहे, निर्धनताहीन समृद्धि में जिएँ, युद्ध की आशंका से मुक्त शांति में रहे, हमारा राष्ट्र हमारे सभी नागरिकों के लिए रहने की एक सुख–स्थली हो।"** कलाम साहब का यह कथन अपने साकार रूप के लिए राष्ट्र में शांति की शिक्षा का फलन है, और शांति की शिक्षा के नवनीत है– सामाजिक–समरसता, संयम, संस्कार–निर्माण, पारस्परिक–सौहार्द एवं सहिष्णुता। इन सब नवनीतों को एकीकृत कर, शिक्षा–रूपी रथ पर सवार होकर ही, हम शांति के पद–चिह्न छोड़ पायेंगे....., इन्हीं पद–चिह्नों पर चलने वाली शिक्षा ही अपने वास्तविक रूप में शांति की शिक्षा है, अमन की शिक्षा है, चैन की शिक्षा है सकून की शिक्षा है या यों कहें कि अपने व्यापक अर्थ में शिक्षारूपी पद शांति का ही पर्याय है, अशांति तो उसकी अनुपस्थिति के कारण ही पैदा होती है...

संकेताक्षर– शांति–शिक्षा, सामाजिक–समरसता

विषयपरक–पृष्ठभूमि

शांति व संस्कार वर्तमान के मानव–जीवन की सर्वाधिक अपेक्षित मानव मूल्य है। शांत व समरसता सहित सहजीवन, पृथ्वी पर संस्कार युक्त–विकास की एक सर्वकालिक आवश्कतापरक अवधारणा है, जिसका महत्व कभी भी समाप्त नहीं होगा। शांति के लिए शिक्षा नैतिक–विकास के साथ उन मूल्यों, दृष्टिकोण और कौशलों के पोषण पर बल देती है, जो प्रकृति और मानव जगत के बीच सामंजस्य बिठाने के लिए आवश्यक है। सामाजिक–न्याय, समानता एवं सामाजिक–समरसता की स्थापना शांति–शिक्षा के महत्वपूर्ण घटक है। इसीलिए **भगवान श्रीकृष्ण ने गीता** में अर्जुन का निर्देशन करते हुए कहा है कि **"जो अपने आहार, विहार, विचार एवं व्यवहार में संयम रखता है और सभी स्थानों पर नियंत्रित रहता है, वही वास्तव में शांत कहलाता है। जब वह शांत है, तभी परिवार, समाज और विश्व को शांति दे सकता है। अशांत व्यक्ति का मन भटकता रहता है। उसके मन में दुविधा होती है और चंचल मन के साथ व्यक्ति किसी बात के लिए ठोस निर्णय नहीं ले पाता।**[1] इस प्रकार स्पष्ट है कि पृथ्वी पर जीवन का आधार सहअस्तित्व, सहकार, सहिष्णुता एवं संस्कार–युक्त पारिस्थितिक सन्तुलनों का सम्मान करने जैसी प्रवृत्तियां है, और इन प्रवृत्तियों की स्थापना का आधार है, शांति। चूंकि शिक्षा मानव जीवन की अमूल्य निधि है, जिसका अवलम्ब लेकर हम एक संतुलित जीवन का मार्ग निर्मित कर सकते है। इस कारण शांति की स्थापना का कार्य भी सनातन व सर्वकालिक रूप से शिक्षा का अभिप्रेत है।

आज विश्व में चारों ओर अशांति है, क्योंकि शाश्वत मानवीय–मूल्य, भौतिक–मूल्यों से प्रभावित हो रहे हैं, जिससे मानवीय जीवन की गुणवत्ता का अवमूल्यन हो रहा है। आज का समाज एक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। परिवर्तन की इस असामयिक आंधी ने जहां एक ओर जीवन के बहुतेरे मूल्यों एवं प्रतीकों पर प्रहार किया है तो वहीं दूसरी ओर हमारी पूरी की पूरी पीढ़ी को परम्परा और आधुनिकता, जड़ता और गतिमयता के द्वन्द्वों में भटकने के लिए छोड़ दिया है। इस संबंध में **शिक्षाशास्त्री वी.आर. तनेजा** के ये शब्द एकदम प्रासंगिक लगते है कि **"भौतिकता ने आज हम सब को इतना घेर लिया है कि हमसे लगभग प्रत्येक धन के देवता का उपासक बन गया है। सभी मूल्य प्रतिमान हवा में उड़ गये हैं, और लोग लूटमार और शक्ति प्राप्त करने की होड़ में लगे हुए है। बुद्धिजीवी भी या तो पृथकत्व का शिकार बन गये है या किराये के लोगों जैसा बर्ताव करने लगे है। विश्वविद्यालय और कॉलेज तुच्छ दलबन्दी से बिगड़ रहे हैं। भावनाएँ तर्क पर हावी है। साधारण मनुष्य प्रचलित भ्रष्टाचार के बोझ से**

चीख रहा है। स्वार्थीपन, शोषण एवं पाखंड आज के जीवन की सामान्य विशेषताएँ हैं। हम संकुचित दलबन्दी, क्षेत्रियता और कट्टरता की जकड़ में आ गये है। मानव ने भले ही चन्द्रमा पर विजय प्राप्त कर ली हैं, लेकिन वह मस्तिष्क पर विजय प्राप्त करने में असमर्थ हो गया है।[2]

वर्तमान के मनुष्य ने पूर्व की अपेक्षा अधिक भौतिक–संसाधन जुटा कर अपने जीवन को आरामदायक बना लिया है, लेकिन इसके साथ–साथ आज पूरा विश्व नस्ल, धर्म, जाति, वर्ग और आस्था के आधार पर बटने की स्थिति में पहुंच चुका है। एक प्रकार से यह विरोधभाषी स्थिति है कि एक ओर मानव इस पृथ्वी पर मौजूद सभी प्राणियों में सर्वाधिक विकसित और बुद्धिमान प्राणी के रूप में उभरा है, तो वहीं दूसरी ओर मानव जाति अत्यधिक आत्मकेन्द्रित, व्यक्तिवादी, असहिष्णु और काफी हद तक आत्मघाती बन गयी है। इस कारण आज हम अभुतपूर्व हिंसा के दौर में जी रहे है। आज हम भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार, अलगाववाद, जातिवाद, आतंकवाद, मूल्य–संकट एवं हिंसा का दौर देखे तो ऐसा लगता ही नहीं कि कभी भारतीय–संस्कृति–**सर्वे भवंतु सुखिनः, वसुधैव कुटुम्बकम, पापाय परपीड़नम्** एवं **सर्वशान्ति की स्थापना** जैसे आदर्शों व मूल्यों की अधिष्ठात्री रही है। भारतीय संस्कृति व दर्शन अपने स्थापना–काल से लेकर आज तक मूल्यों व आदर्शों का प्रतिमान रहा है। इसी कारण शांति की स्थापना व इस दिशा के शैक्षिक–मॉडल की दृष्टि से भारतीय शिक्षा–दर्शन एवं उसके तद्नुरूप जीवन–शैली एक अग्रगामी उपागम है, लेकिन वेदना यह है कि ऐसी समृद्ध विरासत होने के बावजूद हम आज अशांत–सहवास के गर्त में पड़े हुए है।[3]

यदि हम वैश्विक संदर्भों में देखें तो आज मिश्र व लीबिया सहित विश्व के अनेक देशों में नागरिक अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ रहे हैं। इसी कड़ी क्रम में जब हम चीन, नामीबिया, सोमालिया एवं अफगानिस्तान आदि देशों में हाल के समय में हुई अमानवीय यातनाओं, नरसंहार, गम्भीर अपराधों, नशीलें पदार्थों के व्यापार, हिंसक अस्त्र–शस्त्रों के निर्माण, जापान, इटली, युनान सहित अनेक प्रजातांत्रिक देशों में राजनैतिक नेताओं के भ्रष्टाचार के कारनामों, पर्यावरण को नष्ट करने की प्रवृत्तियों एवं एड्स से मरने वालों के आंकड़ें देखें तो सिद्ध होता है कि इक्कीसवी शताब्दी के इस विश्व में विज्ञान व तकनीकी के लाभ के साथ–साथ कुछ गम्भीर चुनौतियां भी उपस्थित है। आज समूचा विश्व युद्ध सामग्री के विस्तार, अत्यधिक राजनीतिक–तनाव, अन्तर्राष्ट्रीय–विवाद, धन व प्राकृतिक साधनों का असमान वितरण, अन्तर्कलह एवं मानवाधिकार हनन जैसी अनेक समस्याओं का सामना कर रहा है। ये सभी परिस्थितियां शांत–सहवास, सामाजिक–समरसता एवं संस्कारयुक्त विकास की अवधारणाओं को प्रभावित कर, अशांत–विश्व अर्थात् युद्धोंन्मुख विश्व को बढ़ावा दे रही है। इन परिस्थितियों से बचने के लिए आने वाली पीढ़ी में शांति के सृजन की संस्कृति के विकास की तीक्ष्ण आवश्यकता है, और इस आवश्यकता की महती आपूर्ति 'शांति की शिक्षा' द्वारा ही सम्भव है।

'शांति की शिक्षा' के महत्व को स्वीकार करते हुए **युनेस्कों** द्वारा नियुक्त **डेलर आयोग ने अपनी रिपोर्ट "लर्निंग : ट्रेजर विदन" में शिक्षा के चार स्तम्भों में "लर्निंग : लिव टुगेदर"** यानि **"सह–अस्तित्व के लिए शिक्षा"** को एक स्तम्भ माना है। **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986** में कहा गया है कि **"भारत ने सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार मानते हुए हमेशा विश्व–शान्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के लिए कार्य किया है। इस प्राचीन परम्परा को बनाये रखने के लिए शिक्षा को इस विश्व–दृष्टि को सशक्त करना होगा, साथ ही आगामी पीढ़ी को अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के लिए प्रेरित करना होगा। इस पक्ष की उपेक्षा नहीं जा सकती है।**[4] शांति की शिक्षा के इसी महत्व को समझते एवं स्वीकार करते हुए

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) नई दिल्ली ने विद्यालयीय पाठ्यक्रम में 'शांति' नामक मूल्य को प्रोत्साहित करने के लिए 'शांति–शिक्षा' को सम्मिलित किया है। **राष्ट्रीय पाठ्यक्रम प्रारूप (2005)** में भी 'शांति की शिक्षा' के महत्व को स्वीकार करते हुए लिखा गया है कि **"शांति की शिक्षा एक ऐसे सरोकार के रूप में विकसित हो, जो मानव–अधिकार, न्याय, सहिष्णुता, सहकार, सामाजिक–दायित्व, समरसता एवं सास्कृतिक–विविधता का सम्मान करते हुए, समूचे स्कूली जीवन पर छा जाए।**[5] इसी क्रम में **एन.सी.ई.आर.टी.** ने **"नेशनल फोकस ग्रुप ऑन एज्यूकेशन फॉर पीस"** नामक पॉजिशन पैपर भी प्रकाशित कर, इस दिशा की एक दृष्टि देने का प्रयास किया है।

वर्तमान के समग्र परिवेश व संदर्भों के विश्लेषण से यह सिद्ध है कि शिक्षा एक सार्थक सम्पदा है, जो वर्तमान की इस दिशा की चुनौतियों का सामना करने के लिए किये गये प्रयासों की सफलता में सहायक हो सकती है। इस संबंध में **डेलर आयोग** ने बड़ा ही सामयिक लिखा है कि **"शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है, जिसमें मानव के विकास का सुसंगठित स्वरूप पनप सकें तथा जिससे गरीबी, अलगाव, अज्ञान, शोषण एवं युद्ध की स्थितियों का निराकरण हो सके, इसलिए शांति, धैर्य एवं साहस प्रदान करना, शिक्षा की जिम्मेदारी है।**[6] शांति की शिक्षा की सांदर्भिक उपादेयता को समझते हुए **संयुक्त राष्ट्र संघ** ने **वर्ष 2000** को **"शांति की संस्कृति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष"** घोषित किया था, **इसके साथ–साथ 2000 से 2010 के दशक को "डिकेड ऑफ पीस" के रूप में** घोषित किया।[7] **राष्ट्रीय अध्यापक–शिक्षा परिषद् (एन.सी.टी.ई.) नई दिल्ली** ने युनेस्कों के सहयोग से एक परियोजना **"अध्यापक शिक्षा में शांति शिक्षा"** को चलाया है। इसके अलावा समय–समय पर विभिन्न समाज–विज्ञानियों एवं शिक्षाविद्ों ने भी शांति की शिक्षा के महत्व को रेखांकित किया है। बाल–मनोविज्ञानी मारिया मॉन्टेसरी ने तो यहां तक कहा कि **"सभी शिक्षा शांति के लिए है।"** महात्मा गाँधी के समग्र चिन्तन में ही अहिंसा व शांति केन्द्र में है। इसी प्रकार **अर्थ एण्ड पीस एज्यूकेशन एसोसिएट्स इन्टरनेशनल (ई.पी.ई.) न्यूयार्क** भी लगातार संतुलित–विकास, अहिंसा, सामाजिक–न्याय व समरसता, अन्तर्राष्ट्रीय–समानता तथा सहअस्तित्व व सहभागिता आधारित निर्णय प्रक्रिया जैसे कार्यों को शांति स्थापना की दृष्टि से उन्नतीय दिशा दे रहा है। सार भाव में स्पष्ट है कि शांति की शिक्षा, शिक्षा की केवल सैद्धान्तिक धारणा न होकर बल्कि एक व्यवहारिक ;एप्लायडद्ध व सार्वभौमिक अवधारणा है, जिसकी आज निज से लेकर विश्व तक, शांति व समरसता की स्थापना के साथ–साथ संस्कारमय–विकास के लिए महती आवश्यकता है।

समाज में शांति की स्थापना के मुख्य सरोकार समानता, न्याय, सह–अस्तित्व, सहकार तथा समरसता है। इस प्रकार समाजिक–समरसता एक ऐसी मूल्यपरक–व्यवस्था है, जिसमें सभी मानव, सबके लिए, अपनी जीवन पद्धति को इस प्रकार दिशा देते है कि उनका व्यवहार स्वयं, परिवार, पड़ौस, कार्यस्थल, नगर, जाति, समाज, देश एवं विश्व के लिए ऐसा सुख व आनंद का सृजन करता है, जिससे व्यापक–हित के लिए सीमित–हित को स्वेच्छा से त्याग करने की प्रवृत्ति को स्वचालित रूप से दिशा मिलती है, फलन अशांति का प्रश्न ही नहीं उठेगा। सरल भाव में वैश्विक–व्यवस्था से लेकर निज–प्रबंध तक जब व्यक्ति विशेष बड़े हितों के लिए संकीर्ण हितों का स्वेच्छा से त्याग करेगा तो टकराहट का पर्यावरण पैदा नहीं होगा, द्वन्द्वों का उदय नहीं होगा, फलन सर्वोदय की स्थिति पैदा होगी और यह स्पष्ट है कि सर्वोदय की स्थितियां पैदा करना ही शांति की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। अतः सामाजिक–समरसता की स्थापना की विषय–वस्तुएँ ही, शांति की शिक्षा की मुख्य विषय–वस्तु व सरोकार है।

इस प्रकार शांति की शिक्षा, शोषण रहित, उत्पीड़न रहित तथा अहिंसक समाज के सृजन की शिक्षा है, जो शांति के लिए भावी पीढ़ी में उन मूल्यों, दृष्टिकोणों एवं कौशलों के पोषण पर बल देती है, जो व्यापक के लिए संकीर्ण को त्यागने की प्रवृत्ति पैदा करें, जो प्रकृति और मानव के बीच सामंजस्य बिठाने के प्रबल प्रयास करें, जो संस्कार–युक्त विकास को दिशा प्रदान करें। इसी क्रम के व्यापक–भाव में हम कह सकते है कि जो मानव–मात्र की शक्ति, बुद्धि, श्रम और ज्ञान का इस प्रकार विनियोजन करें कि समाज में सर्वमंगल की भावना व समरसता का दर्शन व प्रबंधन, स्वतः भाव से स्थापित हो जाए। इस प्रकार सामाजिक– समरसता का पर्यावरण शांति–स्थापना की अनिवार्य मांग तथा शांति–शिक्षा का मुख्य सरोकार है। इसलिए सामाजिक–समरसता की स्थापना का शंखनाद, केवल और केवल सर्वकालिक– उपयोगिता वाली 'शांति की शिक्षा' से होना चाहिए। क्योंकि शांति की शिक्षा और सामाजिक–समरसता दोनों ही अवधारणायें एक–दूसरे की बीज और फल दोनों हैं...

सामाजिक–समरसता की स्थापना में शांति–शिक्षा की भूमिका

वारेस (1988) ने नीदरलैण्ड में किये अपने शोध के आधार पर पाया कि पूर्वाग्रहों तथा पक्षपातों को हटाने, समानता व न्यायिक प्रशिक्षण एवं सामाजिक–समरसता की स्थापना का मुख्य आधार शांति की शिक्षा है। ओबैख (1987) ने सिद्ध किया कि शांति की शिक्षा का मुख्य आधार मानव की चेतना है, जिससे वैयक्तिकता का सामाजिक शक्तियों के साथ सामन्जस्य किया जाता है। इस प्रकार के संदर्भों से स्पष्ट है कि शांति की शिक्षा एक वृहद् अवधारणाा है, जिसमें निःशस्त्रीकरण, मानवाधिकार, पर्यावरण, अहिंसा, मानवता व न्याय, अन्तर्राष्ट्रीय–सहयोग, सहअस्तित्व, सहकार एवं समरसता के साथ–साथ वैश्विक–समझ जैसे मुद्दें स्वीकृत रूप से सम्मिलित है। शांति की संस्कृति का सृजन एवं संरक्षण, सामाजिक–समरसता के उन मानवीय–गुणों के विकास का फलन है, जिसमें व्यक्ति व्यापक–हित के लिए–सीमित हित का त्याग कर सके अर्थात् ब्रह्माण्ड के हित के लिए विश्व, विश्व–शांति के लिए देश, देश के लिए प्रदेश, प्रदेश के लिए अपनी जाति, जाति के हित के लिए अपने परिवार तथा अपने परिवार के हित के लिए अपने व्यक्तिगत हित को त्याग सके। इसके लिए शांति की शिक्षा व्यक्ति में ऐसे मूल्यों, दृष्टिकोण व कौशलों का विकास करेगी, जिससे व्यक्ति अपनी शारीरिक, मनोवैज्ञानिक व सामाजिक आवश्यकताओं की अपेक्षा व्यक्तिगत–गुणों को, और व्यक्तिगत गुणों की अपेक्षा सामाजिक–मूल्यों को वरीयता प्रदान करें, फलन सामाजिक–समरसता व संस्कारमय–विकास का मार्ग अपने आप प्रशस्त हो जाएगा।

चिर–शांति की स्थापना के लिए सामाजिक–समरसता के पर्यावरण का विकास करना आवश्यक है। इस निमित्त त्याग, धैर्य, न्याय, समानता, सहयोग, उत्तरदायित्व, सहअस्तित्व एवं सर्वोदय जैसे मूल्यों को मानवीय समाज में प्रसारित व प्रतिस्थापित करने की जिम्मेदारी शांति–शिक्षा व उसके परौकारों की है। अतः शांति की शिक्षा अपने ज्ञानात्मक, कौशलात्मक एवं अभिवृत्त्यात्मक पक्षों से ऐसे व्यवहारगत परिवर्तनों को दिशा प्रदान करेगी, जिसके चलते सामाजिक–समरसता के वातावरण को बल मिलेगा। इस दृष्टि से शांति की शिक्षा के ज्ञानात्मक पक्ष में सामाजिक–समरसता की स्थापना के एकीकृत मूल्यों का ज्ञान, सांस्कृतिक –एकता का ज्ञान, संस्कारमय–विकास की अवधारणा का ज्ञान, द्वन्द्व–परिमार्जन का ज्ञान, परस्पर–निर्भरता तथा उत्तरदायित्व व त्याग के महत्व के ज्ञान के साथ–साथ इसके वैश्विक –पक्षों तथा प्रभावों का ज्ञान भी शामिल है। इसी प्रकार शांति की शिक्षा के कौशलात्मक पक्ष में शांत–सहवास के जीवन–कौशल, समूह में कार्य करने के कौशल, सहअस्तित्व व स्वयं –सहायता के कौशल,

उत्तरदायित्व–निर्वहन के कौशल, व्यापक व संकीर्ण हितों की तुलना व तद्नुरूप निर्णय लेने के कौशल, अन्तर्राष्ट्रीय–सहयोग व समझ के कौशलों के साथ–साथ द्वन्द्व–परिमार्जन तथा सहभागिता की दक्षता जैसे अनेक कौशल भी शामिल है।

उपर्युक्त ज्ञानात्मक व कौशलात्मक पक्षों की दृष्टि से शांति–शिक्षा की जिम्मेदारी निर्वहन की भूमिका से जनमानस में दिशात्मक–अवबोध व अभिवृत्त्यात्मक–दृष्टिकोण विकसित होगा, तभी जाकर सामाजिक–समरसता का वातावरण अपना पूर्ण व अपेक्षित आकार ले सकेगा। अतः इस दृष्टि से शांति की शिक्षा को जनमानस में त्याग, सहनशीलता, न्याय, समानता, एकता, अंतर्निर्भरता, परमार्थनिष्ठा, सहयोग, सामाजिक–उत्तरदायित्व व प्रतिबद्धताओं, मानवता व मूल्यों के प्रति संवेदनशीलताओं के साथ–साथ सुखद व आनंद जीवन की मानसिक अभिवृत्तियों का विकास करना होगा। यदि देखा जाए तो शांति की अवधारणा अपने आप में एक मानसिक–अभिवृत्ति ही है। इस प्रकार शांति की शिक्षा अपने ज्ञानात्मक, कौशलात्मक व अभिवृत्तियात्मक पक्षों के साथ सामाजिक–समरसता को विकसित व प्राप्त करने का सशक्त माध्यम है। इस संबंध वैश्विक समाज–विज्ञानी **आचार्य महाप्रज्ञ** का यह कथन एकदम समीचीन है कि **"वैश्विक–शांति की स्थापना के लिए सामाजिक–सम्बन्ध और सम्बन्धातीत–चेतना की शिक्षा, एक आवश्यक उपागम है। शांति व सत्य तक पहुंचने का एकमात्र मार्ग है–अनेकान्त। अनेकान्त का अर्थ है–पक्षातीत–चेतना। वह किसी एक के प्रति नहीं झुकती। उसमें तटस्थ रहकर सारे पक्षों को एक साथ समन्वित कर, सर्वहित की दृष्टि से निष्कर्ष निकाला जाता है।**[8] सामाजिक–समरसता की स्थापना में शांति की शिक्षा एक महत्वगामी उपागम है, इसी तथ्य को स्वीकार करते हुए **एन.सी.ई.आर.टी.** ने **राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप–2005** में सामाजिक–दायित्वों, समानता, सामाजिक–न्याय, सामाजिक–प्रतिबद्धताओं, सहकार एवं सहिष्णुता को शांति की शिक्षा के महत्वपूर्ण घटकों के रूप में स्वीकारा हैं.....

सामाजिक–समरसता की स्थापना में शांति–शिक्षा के उत्तरदायित्व

वर्तमान में व्यक्तियों, समूहों और राष्ट्र के संदर्भ में विवाद सुलझाने के लिए अहिंसात्मक–उपाय ढूंढ़ने के कौशलों के पोषण की जरूरत है। वैश्विक, राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तर पर बढ़ती हिंसा के चलते शिक्षा व शैक्षिक–सरोकारों में शांति की शिक्षा का स्थान बाध्य रूप से स्पष्ट है। शांति स्थापित करने की दीर्घकालिक प्रक्रिया में शिक्षा एक महत्वपूर्ण आयाम है। शांति–शिक्षा स्वरूपी इस महत्वपूर्ण आयाम में सहनशीलता, न्याय, अंतः सास्कृतिक–समझ, समरसता, मानवाधिकार, निःशस्त्रीकरण, अहिंसा, सहयोग, पर्यावरण आदि से संबंधित नागरिक– जिम्मेदारियां शामिल है। सभी नीतिगत–प्रयासों, शैक्षिक–अभिकरणों, संगठनों तथा संसारभर की महान विभूतियों का एकमत स्वरूप में मानना है कि शांति स्थापना की जिम्मेदारी शिक्षा की है। इस कारण शांति स्थापना के आवश्यक मूल्य, संवेदनाऐं, समझ, कौशल एवं अभिवृत्ति आदि को विकसित करने का सामाजिक–उत्तरदायित्व, शिक्षा–स्वरूपी महत्वपूर्ण साधन से परे नहीं हो सकता। निज से लेकर वैश्विक–स्वरूप में सामाजिक–समरसता की भावना व कौशलों का पोषण व विकास करना, शांति की शिक्षा का मुख्य संदर्भ व विषय–वस्तु है। इस निमित्त शांति से संदर्भित शिक्षा का मुख्य व प्राथमिक उत्तरदायित्व सामाजिक–समरसता के पर्यावरण को न केवल विकसित करना है बल्कि उसकी सांस्कृतिक–समझ का भी पुरजोर रूप से विकास करना भी है। जिससे शांत–सहवास व संस्कार–युक्त विकास को प्रभावी दिशा मिल सकेगी। उपर्युक्त विचार–क्रम की पृष्ठभूमि के मद्देनजर सामाजिक–समरसता की स्थापना के शैक्षिक– उत्तरदायित्व अग्र बिन्दुओं में निहित है.....

- सामाजिक–समरसता के सभी सरोकारों को शिक्षा के माध्यम से प्रचारित व प्रसारित करने का दायित्व।
- सभी संकायों के शैक्षिक–विषयों के पाठ्यक्रमों में सामाजिक–समरसता से जुड़े मुद्दों को डिजायन कर, समावेशित किया जाये।
- विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों आदि में सामाजिक–समरसता के उन्नयन हेतु विशिष्ट–वार्त्ता, संगोष्ठियां एवं दिशापरक्–उत्सवों के अनिवार्य आयोजनों के प्रावधानों को सुनिश्चित करने का दायित्व।
- विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में ऐसे क्लबों एवं रीडिंग–रूम की व्यवस्था की जाए, जो सामाजिक–समरसता, सामाजिक–न्याय व समानता के पर्यावरण को बल प्रदान करें।
- ऐसे उदाहरणों, कहानियों, किस्सों एवं संस्मरणों को शिक्षण–प्रक्रियां में समावेशित किया जाए, जो सामाजिक–समरसता, समानता, स्वैच्छिक–त्याग एवं सामाजिक–न्याय आदि की दिशा में प्रेरणा का कार्य करें।
- सामाजिक–एकता में बाधक मुद्दों एवं द्वन्द्वों को रेखांकित कर, उन्हें दूर करने की शैक्षणिक–तकनीकी को प्रबंधित किया जाए।
- ऐसी फिल्मों व नाटकों की सूची तैयार की जाए, जो न्याय, समानता एवं समरसता जैसे शांति के मूल्यों को बढ़ावा देती हो। उन्हें समय–समय पर स्कूलों में दिखाया जाए।
- सामाजिक–समरसता की स्थापना की दृष्टि से शांति की शिक्षा के प्रयासों में मीडिया और गैर सरकारी संगठनों की सहभागिता को भी सुनिश्चित किया जाए।

इस प्रकार प्रकट है कि उपर्युक्त दायित्व–निर्वहन की भूमिका अदा करके, शांति की शिक्षा ऐसी मानसिक क्रान्ति को दिशा दे सकती है, जिससे शांति की अवधारणा, सिद्धान्त से व्यवहार के धरातल पर उतर आयेगी, जिसकी आज हमें महती आवश्यकता भी है। अतः शांति की शिक्षा से सामाजिक–समरसता को स्थापित करने का कार्य, एक अच्छा कार्य है, इसे प्रारम्भ करने के जिस वक्त की हम प्रतीक्षा कर रहे है, वो वक्त यही है.....

निष्कर्ष

आज शक्ति और संसाधन हासिल करने की अंधी दौड़ में दीर्घकालिक मानव–मूल्य प्रायः सभी देशों में पीछे छूट गये है। आर्थिक व भौतिक संसाधनों की प्रतियोगिता में उलझा आज का विश्व लगभग अशांत–बदहाल का प्रतिनिधित्व कर रहा है। इन परिस्थितियों में शिक्षा को नागरिकों में शांति, सहिष्णुता, दायित्व व त्याग की संस्कृति, संस्कारमय–विकास की धारणा, सामाजिक–न्याय, समानता, सामाजिक–प्रतिबद्धता, शाश्वत–मूल्य चिन्तन, पारस्परिक–निर्भरता, अन्तर्राष्ट्रीय–सहयोग एवं सामाजिक–समरसता आदि के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी। इस संबंध में हमारे **पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम** का यह कथन एकदम शिक्षापरक या ज्ञानपरक है कि **"हमारा सपना : लोग स्वच्छ–हरित पर्यावरण में रहे, निर्धनताहीन समृद्धि में जिएँ, युद्ध की आशंका से मुक्त शांति में**

रहे, हमारा राष्ट्र हमारे सभी नागरिकों के लिए रहने की एक सुख–स्थली हो।[9] कलाम साहब का यह कथन अपने साकार रूप के लिए राष्ट्र में शांति की शिक्षा का फलन है, और शांति की शिक्षा के नवनीत है– सामाजिक–समरसता, संयम, संस्कार–निर्माण, पारस्परिक–सौहार्द एवं सहिष्णुता। इन सब नवनीतों को एकीकृत कर, शिक्षा–रूपी रथ पर सवार होकर ही, हम शांति के पद–चिह्न छोड़ पायेंगे....., इन्हीं पद–चिह्नों पर चलने वाली शिक्षा ही अपने वास्तविक रूप में शांति की शिक्षा है, अमन की शिक्षा है, चैन की शिक्षा है सकून की शिक्षा है या यों कहें कि अपने व्यापक अर्थ में शिक्षारूपी पद शांति का ही पर्याय है, अशांति तो उसकी अनुपस्थिति के कारण ही पैदा होती है.....

***सह आचार्य**
आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा
जयपुर (राज.)
****सहायक परियोजना निदेशक रूसा,**
आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा जयपुर, (राज.)

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, दिनेश कुमार "वर्तमान संदर्भ में शांति–शिक्षा की संदर्भित उपादेयता" परिप्रेक्ष्य, न्यूपा, नई दिल्ली, वर्ष 15, अंक–2, अगस्त–2008, पृ.सं.–71–80.
2. "मूल्यपरक–शिक्षा", उभरते भारती समाज में अध्यापक एवं शिक्षा (2) BE-I, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा, 1990, पृ.सं.–70.
3. रस्तोगी, कृष्ण गोपाल, "मानवीय मूल्य विकासःव्यावहारिक आचरण", राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय, नई दिल्ली 2001, पृ.सं.–1.
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति : 1986", इकाई–13, उभरते भारतीय समाज में अध्यापक एवं शिक्षा (3), कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा, 1990, पृ.सं.–71.
5. "राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005", एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, 2006, पृ.सं.–69–70.
6. परिप्रेक्ष्य, न्यूपा, नई दिल्ली,, वर्ष 15, अंक–2, अगस्त 2008, पृ.सं.–71–80.
7. नेशनल फोकस ग्रुप ऑन एज्यूकेशन फार पीस", पॉजिसन पैपर, एन.सी.एफ–2005, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, 2006, पृ.सं.–5.
8. आचार्य महाप्रज्ञ, "सामाजिक संबंध और सम्बन्धित चेतना", समाज व्यवस्था के सूत्र, जैन विश्व भारती, लाडनूं राजस्थान, 2009, पृ.सं.–58.
9. आचार्य महाप्रज्ञ एवं ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, "सुखी परिवार समृद्ध राष्ट्र", प्रभात प्रकाशन – दिल्ली, 2009 पृ. सं.–196.